हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड

बनाम

आर.जे.शाह और कंपनी

अप्रेल 15, 1999

[बी.एन.किरपाल और डी.पी.मोहपात्र, जे.जे.]

मध्यस्था अधिनियम, 1940

निर्णय को चुनौती दी गई-आरोप यह है कि मध्यस्थ ने अपने अधिकार क्षेत्र की सीमा को पार किया था-अनुबंध के निर्माण से संबंधित विवाद-मध्यस्थ को अनुबंध की शर्तें समझाने व उनकी व्याख्या करने हेतु बुलाया गया-निर्णय लिया गया, यदि अधिकार क्षेत्र में त्रुटि है तो निर्णय रद्द किया जा सकता है, लेकिन यदि अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में त्रुटि की गई हो तो निर्णय रद्द नहीं किया जा सकता है-केवल इसलिए कि एक अन्य दृष्टिकोण संभव था यह नहीं कहा जा सकता कि मध्यस्थ ने निर्णय देने में अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया था।

मध्यस्थ का क्षेत्राधिकार-मध्यस्थता खण्ड का निर्माण या अनुबंध या कानून में एक विशिष्ट शब्द जो मध्यस्थ को किसी विवाद पर निर्णय लेने की अनुमति या शक्ति नहीं देती है या विशेष विवाद या दावे को उठाने के

लिए एक विशिष्ट रोक है-निर्णय लिया गया कि मध्यस्थ द्वारा इसके संबंध में दिया गया कोई भी निर्णय अधिकार क्षेत्र से बाहर होगा।

हिमाचल प्रदेश राज्य में गिरी पनबिजली परियोजना के निर्माण के संबंध में पक्षो के बीच एक अनुबंध किया गया था, और अनुबंध में नियम और शर्तों को शामिल किया गया था, जो पक्षों के बाध्यकारी थे। प्रत्यर्थी को यह अनुबंध 504 लाख रूपये के लिए प्रदान किया गया था। 20 प्रतिशत की विचलन सीमा से अधिक कार्य किये जाने पर मूल्य संशोधन के लिए अनुबंध प्रदान किया गया था। प्रतिवादी ने दरों में संशोधन का दावा तब किया जब अनुबंध मूल्य से लगभग 36 लाख रूपये से अधिक का काम किया गया था। प्रतिवादी के दावे का अपीलार्थी द्वारा अनुबंध में दिये गये मूल्य संशोधन की व्याख्या पर खण्डन किया गया था। अनुबंध में प्रदान किये गये मूल्य संशोधन के निर्माण/व्याख्या के संबंध में पक्षों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ और मामले को मध्यस्थता के लिए भेजा गया। मध्यस्थों द्वारा विवाद के 7 विषयों पर विचार किया गया।

मध्यस्थों के समक्ष प्रतिवादी का तर्क था कि बाजार दरों के आधार पर संशोधित दरें प्रतिवादी को तब देय होगी जब कार्य का कुल मूल्य अनुबंध के खण्ड 3.2(ई)(ii) के आधार पर मूल्य के 20 प्रतिशत की विचलन सीमा से अधिक हो गया हो।

मध्यस्थों के समक्ष अपीलार्थी का तर्क था कि अनुबंध एक वस्तु दर अनुबंध था और 20 प्रतिशत की विचलन सीमा केवल व्यक्तिगत वस्तु पर लागू होती थी; और अनुबंध के कुल मूल्य पर नहीं, और यह कि विचलन सीमा से अधिक कार्य की दर केवल अनुबंध के खण्ड 12ए में निहित प्रावधानों के अनुसार निर्धारित की जाना आवश्यक था। मध्यस्थों ने एक नोन स्पीकिंग निर्णय दिया। विवाद 1, 2 और 4 के संबंध में निर्णय, जो वर्तमान अपील का विषय है, मध्यस्थों द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में दिया गया था। अपीलकर्ता ने अन्य बातो के साथ-साथ इस आधार पर उच्च न्यायालय में निर्णय पर अपनी आपत्तियां दायर की कि निर्णय अधिकार क्षेत्र से बाहर था और मध्यस्थों ने निर्णय देने में कानूनी कदाचार किया था। एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि विवाद संख्या 7 से संबंधित अधिनिर्णय को छोड़कर शेष अधिनिर्णय अभिलेख पर किसी भी स्पष्ट त्रुटि से ग्रस्त नहीं था। एकल न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ अपीलार्थी ने खण्डपीठ के समक्ष अपील दायर की जिसमें एकल न्यायाधीश के फैसले को बरकरार रखा। इसलिए यह अपील की गई है।

अपीलार्थी ने तर्क दिया कि अनुबंध की सही व्याख्या पर और विशेष रूप से खण्ड 12ए के मध्यस्थों के पास किसी भी वस्तु की दरों को संशोधित करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था क्योंकि निष्पादित अनुबंध का समग्र मूल्य 20 प्रतिशत से अधिक था क्योंकि अनुबंध में केवल तभी वृद्धि की अनुमति दी गई थी जब व्यक्तिगत वस्तु में 20 प्रतिशत से अधिक

का विचलन था और वृद्धि की अनुमति नहीं दी जाती है यदि व्यक्तिगत वस्तु में वृद्धि किये बिना 20 प्रतिशत की समग्र वृद्धि हुई हो अर्थात, निर्णय अनुबंध के स्पष्ट प्रावधानों द्वारा मध्यस्थ को दिये गये अधिकार से बाहर था और इसलिए यह अधिकार क्षेत्र के बिना था; और ब्याज का वह निर्णय मध्यस्थों द्वारा पारित नहीं किया जा सकता था क्योंकि प्रतिवादियों द्वारा मध्यस्थों के समक्ष ब्याज के निर्णय के लिए दावा नहीं किया गया था।

प्रत्यर्थी का तर्क था कि संशोधित दरों के लिए उसका दावा अनुबंध की व्याख्या पर आधारित था और यह बिन्दु विशेष रूप से मध्यस्थों को संदर्भित किया गया था और इसलिए मध्यस्थों का निर्णय अंतिम और बाध्यकारी था तथा इसे रद्द नहीं किया जा सकता था।

याचिका खारिज करते हुए न्यायालय ने कहा,

निर्णयः 1. यदि क्षेत्राधिकार में कोई त्रुटि है तो निर्णय को रद्द किया जा सकता है लेकिन यदि क्षेत्राधिकार के प्रयोग में त्रुटि हुई हो तो निर्णय को रद्द नहीं किया जा सकता है। अनुबंध का अर्थ समझने के लिए न्यायालय यह कहने का बोझ अपने ऊपर नहीं ले सकती थी कि निर्णय अनुबंध के विपरीत था और इस तरह मध्यस्थों ने अपने अधिकार क्षेत्र के बाहर काम किया था। यह स्पष्ट है कि जब मध्यस्थ को एक अनुबंध का अर्थ समझने की आवश्यकता होती है तब केवल इसलिए कि एक अन्य दृष्टिकोण संभव हो सकता है,न्यायालय अनुबंध का अर्थ अलग तरीके से

समझने और फिर यह देखते हुए निर्णय को रद्द करना उचित नहीं होगा कि मध्यस्थ ने निर्णय देने में अपने अधिकार क्षेत्र को पार किया है।

जीवराज भाई उज्जमशी सेठ और अन्य बनाम चिन्तामनराव बालाजी और अन्य, [1964]5 ऐसेसीऔर 480; मैसर्स कपूर नीलोखेरी कारपोरेशन डेयरी फार्म सोसायटी लिमिटेड बनाम भारत संघ व अन्य, [1973] 1 ऐसेसीसी 708; हिन्दुस्थान कन्स्ट्रक्शन कम्पनी लिमिटेड बनाम जम्मू कश्मीर राज्य, [1992] 4 ऐसेसीसी 217 और के.और.रविन्द्रनाथन बनाम केरल राज्य, [1998] 9 ऐसेसीसी 410, के आधार पर

तारापुर एण्ड कम्पनी बनाम कोचीन शिपयार्ड लिमिटेड, कोचीन एवं अन्य [1984] 2 ऐसेसीसी 680; यू.पी.होटल व अन्य बनाम यू.पी. राज्य विद्युत बोर्ड, [1989] 1 ऐसेसीसी 359; पी.वी.सुब्बानायडु व अन्य बनाम आन्ध्रप्रदेश सरकार एवं अन्य, [1998] 9 ऐसेसीसी 407; सुदर्शन ट्रेडिंग कम्पनी बनाम केरल राज्य, [1989] 2 ऐसेसीसी 38 और के.और.रविन्द्रनाथन बनाम केरल राज्य व अन्य, [1996] 10 ऐसेसीसी 35, संदर्भित

न्यू इण्डिया सिविल इरेक्टर (पी) लिमिटेड बनाम तेल प्राकृतिक गेस निगम, [1997] 11 ऐसेसीसी 775, विशिष्ट ।

मस्टिल और बायड द्वारा वाणिज्यिक मध्यस्थता द्वितीय संस्करण पृष्ठ 554 संदर्भित किया गया।

2. यह निर्धारित करने के लिए कि क्या मध्यस्थ ने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर कार्य किया है, यह देखना होगा कि क्या दावेदार मध्यस्थ के समक्ष कोई विशेष विवाद या दावा उठा सकता है। यदि हां तो यह स्पष्ट है कि मध्यस्थ के पास इस तरह के दावे से निपटने का अधिकार क्षेत्र होगा। दूसरी और यदि मध्यस्थता खण्ड या अनुबंध या कानून में कोई विशिष्ट शर्त मध्यस्थ को दावेदार द्वारा उठाये गये विवाद पर निर्णय लेने की शक्ति नहीं देती है या विशेष विवाद या दावे को उठाने पर कोई भी प्रतिबंध है तो मध्यस्थ द्वारा उसके संबंध में लिया गया कोई भी निर्णय स्पष्ट रूप से अधिकार क्षेत्र से बाहर होगा। यह पता लगाने के लिए कि क्या मध्यस्थ ने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य किया है न्यायालय को अनुबंध के साथ-साथ मध्यस्थों को किये गये विवाद के संदर्भ सहित कुछ दस्तावेजों को देखना पड़ सकता है, यह देखने के उद्देश्य से सीमित है कि मध्यस्थ के पास मध्यस्थता कार्यवाही में किये गये दावे पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र है।

3. यह कहना संभव नहीं है कि मध्यस्थ अनुबंध की सीमा के बाहर गया हो संदर्भ देने से पहले पक्षों के बीच आदान प्रदान किये गये पत्रों से पता चलता है कि मध्यस्थों को अनुबंध का अर्थ समझने के लिए कहा गया था ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या ठेकेदार दरों के संशोधन का दावा करने का हकदार था और यदि ऐसा है तो संशोधित दरें क्या होनी चाहिए। इसलिए, मध्यस्थों के समक्ष, विवाद स्पष्ट रूप से

अनुबंध की शर्तों की व्याख्या से संबंधित है। अनुबंध को दोनों पक्षों द्वारा अलग-अलग तरीके से पढा जा रहा था। ठेकेदार द्वारा अनुबंध पर रखे गये दावे को अकल्पनीय नहीं कहा जा सकता है। उस पर निर्णय, भले ही वह त्रुटि से युक्त हो, को अधिकार क्षेत्र के बाहर या अधिकार क्षेत्र के बिना नहीं कहा जा सकता है। उनका अधिकार क्षेत्र स्पष्ट रूप से अनुबंध की शर्तों का अर्थ समझना था और उस पर उनका निर्णय अंतिम और पक्षों के लिए बाध्यकारी है।

4. यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रतिवादी को मध्यस्थों द्वारा ब्याज नहीं दिया जा सका क्योंकि ब्याज देने के लिए मध्यस्थों के समक्ष कोई दावा नहीं किया गया था।

सचिव, सिंचाई विभग, उडीसा सरकार व अन्य बनाम जी.सी.राय, [1992] 1 ऐसेसीसी 508 और उडीसा राज्य बनाम बी.एन.अग्रवाल, [1997] 2 ऐसेसीसी 469 के आधार पर।

सिविल अपीलीय न्यायक्षेत्रः सिविल अपील नं. 712/1986

हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश दिनांक 04.03.85, के एफ.ए.आ.संख्या 15 में।

अपीलार्थी की और से मनिन्दर सिंह।

प्रतिवादी की और से अतुल वाई.चिताले, सुश्री सुचित्रा, ए.चिताले और ऋषिकेश।

न्यायालय का निर्णय दिया गया था

किरपाल, जे. मध्यस्थों के नोन स्पीकिंग निर्णय को उच्च न्यायालय के समक्ष रद्द कराने में असफल होने पर अपीलकर्ता ने विशेष अनुमति के माध्यम से वर्तमान अपील इस उम्मीद के साथ दायर की कि वह इसमें सफल होगा।

हिमाचल प्रदेश राज्य में गिरी पनबिजली विद्युत परियोजना के निर्माण के संबंध में उक्त परियोजना से जुडे कुछ कार्यों के लिए वस्तु दर निविदाएं आमंत्रित की गई थी। 2 दिसम्बर 1967 को प्रतिवादी की निविदा स्वीकार कर ली गई और उसे काम शुरू करने का आदेश दिया गया।

उक्त कार्य के निष्पादन के लिए पक्षों के बीच अपचारिक अनुबंध 2 फरवरी, 1968 को किया गया था। उक्त अनुबंध प्रत्यर्थी को रूपये 5,04,15,107 की राशि के लिए दिया गया था तथा नियम और शर्तें, जो पक्षों पर बाध्यकारी थी, उपरोक्त अनुबंध में शामिल थी। हालांकि यह काम तीन साल के भीतर, यानि, 16 दिसम्बर, 1970 को पूरा करने के लिए निर्धारित किया गया था, फिर भी, इसे 26 फरवरी, 1978 को पूरा किया गया।

प्रत्यर्थी का दावा जिसने मध्यस्थता कार्यवाही को जन्म दिया, जिससे हम संबंधित हैं, को अपने पत्र दिनांक 30 अप्रेल, 1974 में किया गया था, जब उसने अधीक्षण अभियन्ता को सूचित किया कि 540 लाख रूपये से

अधिक का काम किया गया था जो अनुबंध मूल्य से लगभग 36 लाख रूपये अधिक है। प्रत्यर्थी के अनुसार अनुबंध में दिये गये कुल कार्य में 20 प्रतिशत की विचलन की सीमा से अधिक वृद्धि हुई थी इसलिए वह उन कार्यों के संबंध में दरों के संशोधन का हकदार था जो उसने इस विचलन सीमा से अधिक किये थे। प्रत्यर्थी के अनुसार अनुबंध अतिरिक्त वस्तु के लिए दरों की परिकल्पना की गई थी जिसमें दो श्रेणियां शामिल है; (ए) मूल निविदा में शामिल नहीं वस्तु; और (बी) निविदा में शामिल वस्तु के लिए विचलन सीमा से अधिक मात्रा। इन मदों के लिए दरों को पक्षों के बीच आपसी समझौते द्वारा तय किया जाना था जिसमें विफल रहने पर उन्हें मध्यस्थता के संदर्भ में तय किया जाना था। दावेदार के अनुसार वह दरों में संशोधन का हकदार था क्योंकि अनुबंध मूल्य 20 प्रतिशत से अधिक हो गया था और दावा अनुबंध के खण्ड 3.2(ई) की व्याख्या पर आधारित था।

अधीक्षण अभियन्ता ने 6 जून, 1974 के अपने पत्र के माध्यम से उपरोक्त दावे का खण्डन किया था जिसमें उन्होंने प्रत्यर्थी को सूचित किया था कि अनुबंध के खण्ड 12 में 20 प्रतिशत की विचलन सीमा केवल व्यक्तिगत वस्तुओं पर लागू थी अनुबंध के कुल मूल्य के नहीं। अधीक्षण अभियन्ता ने प्रतिवादी को आगे सूचित किया कि उसका दावा असमर्थनीय था और खण्ड-12 ए पर आधारित दरों का भुगतान कुछ निश्चित वस्तुओं के लिए किया जा रहा था जो विचलन सीमा को पार चुकी हो।

इस प्रकार पक्षों के बीच उत्पन्न हुए विवाद का सार यह था कि क्या बाजार दरों के आधार पर संशोधित दरें प्रतिवादी को देय होंगी, जब कार्य का कुल मूल्य विचलन सीमा से अधिक हो गया हो, अर्थात, कुल अनुबंध मूल्य और 20 प्रतिशत जैसा कि तर्क द्वारा दिया गया था या संशोधित दरें/बाजार दरें प्रत्येक वस्तु के लिए देय होंगी जब किसी वस्तु के लिए किया गया कार्य 20 प्रतिशत की विचलन सीमा को पार कर जाता है, जो कि अपीलार्थी का यहां मामला है।

जून, 1975 में मध्यस्थता के संदर्भ में उपरोक्त विवाद के संबंध में दोनों पक्षों के बीच सहमति नहीं बन पाई।

24 अप्रेल, 1975 को अपने पत्र के माध्यम से प्रत्यर्थी ने अपीलकर्ता के मुख्य अभियन्ता को मध्यस्थता के लिए विवादों की एक सूची प्रस्तुत करने हेतु लिखा था।

संदर्भ दिये जाने के बाद प्रत्यर्थी ने मध्यस्थों के समक्ष अपना दावा प्रस्तुत किया और उन्हें 4 जून, 1975 को एक पत्र लिखा जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया था कि 24 अप्रेल, 1975 के उपरोक्त पत्र में विवादों के तहत वस्तुएं शामिल थी जिन्हें मध्यस्थता के लिए संदर्भित किया जा रहा था। 24 अप्रेल, 1975 के पत्र की प्रति मध्यस्थों को संबोधित कर 4 जून, 1975 के पत्र के साथ संलग्न की गई थी।

मध्यस्थों द्वारा संदर्भ में प्रवेश करने के बाद उन्होंने विवाद के निम्नलिखित मुद्दो पर विचार किया किः

"विवाद संख्या-1 विभिन्न कार्यों के लिए दरों में संशोधन और जिस समय से वे लागू होनी चाहिए।

विवाद संख्या-2 विचलन दरों पर देय राशियां, जहां कार्य की अलग-अलग मात्रा विचलन सीमा से अधिक है।

विवाद संख्या-3 कार्य की वस्तुओं को आधारभूत वस्तुओं के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाना चाहिए और विचलन सीमाएं भी आधारभूत वस्तुओं में वर्गीकृत वस्तुओं के मामले में भी।

विवाद संख्या-4 विचलन सीमा के प्रयोजन के विचारार्थ मात्राएं जहां कार्य की मूल वस्तु को सम्बद्ध के साथ निष्पादित किया जाता है जिनके लिए दर निविदा अनुसूची से तय की जाती है।

विवाद संख्या-5 कार्यों के निष्पादन के दौरान विभिन्न समयावधि में कार्य निम्नलिखित मदों के लिए देय दरें

(i) अनुबंध की अनुसूची 5.2 की मद संख्या 6, संरचनात्मक इस्पात का कार्य।

(ii) दीवारों और कटआॅफ में औरसीसी 2500 पीऐसेऔई प्रदान करना, अनुबंध की अनुसूची 5.1 की वस्तु संख्या 9 ।

(iii) औरसीसी 2500 पीऐसेऔई दीवार और कटआॅफ में प्रदान करना, अनुबंध की अनुसूची 5.1 की वस्तु संख्या 9 ।

विवाद संख्या-6 टनलाग सुरंग की खुदाई के लिए दर, मुख्य सुरंग की खुदाई के लिए दरों में संशोधन पर विचार करते हुए।

विवाद संख्या-7 बिजली आपूर्ति के लिए दरों में परिवर्तन के कारण प्रतिवादीगण द्वारा वसूल किये गये अतिरिक्त विद्युत शुल्क की प्रतिपूर्ति।"

उनके स्तर पर अनुबंध के उन खण्डों को निर्धारित करना उचित होगा जिन पर मध्यस्थों के समक्ष पक्षकारों द्वारा अपने प्रतिद्वन्दी विवादों के समर्थन में जहां तक प्रत्यर्थी का सवाल है कि जब कार्य का कुल मूल्य, कुल मूल्य के 20 प्रतिशत से अधिक था तो वृद्धि के लिए उसका दावा खण्ड 3.2 (ई)(ii) पर आधारित था जो निम्नानुसार हैः

"खण्ड 3.2 (ई)(ii): क्या इस निविदा को पूर्ण या आंशिक रूप से स्वीकार किया जाता है, तो हम इसके द्वारा (I).........(ii) निविदा दस्तावेजों में निहित नियम और शर्तों पर निर्देश सभी कार्यों को निष्पादित करने के लिए सहमत हैं। इसमें निहित या संदर्भित किया गया है और निविदा प्रपत्र के खण्ड 12ए में निहित प्रावधानों के अनुसार निर्धारित की जाने वाली दरों पर अधिकतम 20 प्रतिशत तक ऐसेे विचलन को पूरा करने का आदेश दिया जा सकता है।

अनुबंध के तहत 'कार्यों' को परिभाषित किया गया है "जब तक कि विषय या संदर्भ में कुछ ऐसा जो इस तरह के निर्माण के लिए प्रतिकूल नहीं हो तब तक उस अनुबंध द्वारा या उसके आधार पर किये गये कार्यों के रूप में किया जाना चाहिए जिसे निष्पादित किया जाना है, चाहे वह अस्थायी हो या स्थायी हो और चाहे वह मूल, परिवर्तित, प्रतिस्थापित या अतिरिक्त हो।"

मध्यस्थों के समक्ष यहां अपीलार्थी का तर्क था कि अनुबंध एक वस्तु दर अनुबंध था लेकिन यह केवल उन वस्तुओं के संबंध में है जो बाजार दरों को संशोधित करती है जो विचलन सीमा को पार करती है। इसमें अपीलार्थी के अनुसार विचलन सीमा से अधिक कार्य की दर का निर्धारण केवल खण्ड 12ए में निहित प्रावधानों के अनुसार किया जाना आवश्यक था जो निम्नानुसार हैः

खण्ड 12एः अनुबंध या प्रतिस्थापित वस्तुओं के मामले में जो व्यक्तिगत रूप से अनुबंध में निर्धारित मात्रा को विचलन सीमा से अधिक है, आधारभूत काम से संबंधित वस्तुओं को हटा दे, जो ठेकेदार को उपरोक्त खण्ड 12 के तहत करना आवश्यक है, ठेकेदार, आदेश प्राप्ति के 7 दिनों के भीतर इस संबंध में उचित विश्लेषण द्वारा विचलन सीमा से अधिक मात्रा हेतु समर्थित दरों के संशोधन का दावा करेगा। इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी वस्तुओं के लिए दरें मौजूद है। मुख्य कार्य के लिए निविदा में या

खण्ड 12 के उपखण्ड (ii) के प्रावधानों के अनुसार प्राप्त किया जा सकता है और प्रभारी अभियंता प्रचलित बाजार दरों को ध्यान रखते हुए संशोधित कर सकता है। ठेकेदार को उनकी दरों का भुगतान इस प्रकार निर्धारित दरों के अनुसार किया जायेगा।

हालांकि, प्रभारी अभियंता, ठेकेदार को लिखित रूप में नोटिस देकर ऐसी बढी हुई मात्रा या काम करने के अपने आदेश को रद्द करने और ऐसे तरीके से करने की व्यवस्था करने के लिए स्वतंत्र होगा जैसा वह उचित समझे। लेकिन किसी भी परिस्थिति में ठेकेदार इस खण्ड के अन्तर्गत आने वाली वस्तुओं की दरों का निपटान न होने की दलील पर काम को निलम्बित नहीं करेगा।

पूर्ववर्ती अनुच्छेद के सभी प्रावधान विचलन सीमा से अधिक मात्रा के लिए वस्तुओं की दरों में कमी पर समान रूप से लागू होंगे, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी वस्तुओं की दरें मुख्य कार्य के लिए निविदा में मौजूद हैं या उसके अनुसार निकाली जा सकती है। पूर्ववर्ती खण्ड 12 के उपखण्ड (ii) के प्रावधानों के साथ, प्रभारी अभियंता प्रचलित बाजार दरों को ध्यान में रखते हुए ऐसी दरों को संशोधित कर सकता है।"

20 नवम्बर 1976 को मध्यस्थों ने अपना फैसला सुनाया। विवाद संख्या-1, 2 और 4 को एक साथ निपटाया गया और मध्यस्थों ने कोई कारण बताये बिना अपीलकर्ता मण्डल को निर्देश दिया कि वह प्रतिवादी को

पहले से किये गये भुगतान के अलावा विचलन की तारीख से 30 जून 1975 तक 47 लाख रूपये की राशि का भुगतान करें। 30 जून 1975 के बाद किये गये कार्य के लिए अपीलकर्ता मण्डल को प्रत्यर्थी को निर्णय में बताई गई दर पर वस्तुओं के लिए भुगतान करने की आवश्यकता थी। 22 वस्तुएं सूचीबद्ध थी जिनके लिए बढी हुई दर दी जानी थी, हालांकि प्रतिवादी ने 108 वस्तुओं के संबंध में दावा किया था। विवाद संख्या-7 के संबंध में इसमें अपीलार्थी को केवल बिजली शुल्क में भिन्नताआेें की वसूली करने का हकदार माना गया था ना कि 01.03.1974 के बाद प्रभावित शुल्को में भिन्नता की। विवाद के अन्य मदों के संबंध में निर्णय का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है क्योंकि हमारे सामने मुख्य चुनौती विवाद 1, 2 और 4 से संबंधित मध्यस्थ के निर्णय के संबंध में थी।

जब हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय में निर्णय दायर किया गया तो इसमें अपीलार्थी ने अपनी आपत्तियां दर्ज की। दलीलें पूरी होने के बाद निम्नलिखित मुद्दे तैयार किये गयेः

"1. क्या निर्णय अधूरा है/ ओ.पी.आब्जेक्टर।

2. क्या निर्णय अधिकार क्षेत्र से बाहर है? अगर ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव है? ओ.पी.आब्जेक्टर।

3. क्या निर्णय अन्यथा भी अमान्य है और रद्द किये जाने योग्य है। ओ.पी.आब्जेक्टर।

4. क्या निर्णय मध्यस्थता के आधार पर कानूनी कदाचार से ग्रस्त है यदि ऐसा है तो इसका प्रभाव क्या है? ओ.पी.आब्जेक्टर।

इसके बाद ठेकेदार ने एक प्रार्थना पत्र के साथ एक आवेदन (1978 का बी.एन.पी.नं.35) दायर किया कि एक अतिरिक्त मुद्दा तैयार किया जाए जिसके परिणामस्वरूप निम्नलिखित मुद्दा 24.04.1978 को तैयार किया गया था:

प्रत्यर्थी की आपत्ति याचिका कानूनी रूप से बनाये रखने योग्य है अथवा नहीं ओ.पी.पार्टियां।"

पक्षकारों ने विभिन्न मुद्दों पर अपने साक्ष्य प्रस्तुत किये और अन्त में विद्वान एकल न्यायाधीश (सी.और.ठाकुर, जे.) ने अपने आदेश दिनांक 05.04.1979 में कहा कि विवाद संख्या-7 से संबंधित निर्णय को छोड़कर बाकी निर्णय रिकार्ड पर किसी भी त्रुटि से ग्रसित नहीं है।

इसके बाद अपीलार्थी ने डिवीजन बैंच के समक्ष अपील दायर की, जिसमें 04 मार्च 1985 को अपने फैसले से एकल न्यायाधीश के फैसले को बरकरार रखा। इसलिए यह अपील की गई।

अपीलार्थी की और से श्री मनिन्दर सिंह द्वारा दो मुख्य दलीलों का आग्रह किया गया था। उन्होंने प्रस्तुत किया कि अनुबंध और विशेष रूप से खण्ड 12ए की सही व्याख्या पर मध्यस्थों को किसी भी वस्तु की दरों को संशोधित करने का कोई अधिकार नहीं था क्योंकि अनुबंध का समग्र मूल्य

जो निष्पादित किया गया था वह 20 प्रतिशत से अधिक था। निवेदन यह था कि अनुबंध केवल तभी वृद्धि की अनुमति देता है जब व्यक्तिगत वस्तुओं में 20 प्रतिशत से अधिक का विचलन होता है और व्यक्तिगत वस्तुओं में वृद्धि किये बिना 20 प्रतिशत की समग्र वृद्धि होने पर कोई वृद्धि की अनुमति नहीं दी जाती है। उन्होंने तर्क दिया कि नोन स्पीकिंग निर्णय के मामले में भी क्योंकि मध्यस्थों ने अपने अधिकार क्षेत्र को पार कर लिया था, इसलिए निर्णय को रद्द किया जा सकता है। उन्होंने आगे कहा कि ब्याज के निर्णय के लिए मध्यस्थों के समक्ष कोई दावा नहीं किया गया था और इसलिए मध्यस्थों द्वारा ब्याज के निर्णय को भी कायम नहीं रखा जा सकता है।

हालांकि प्रत्यर्थी के विद्वान वकील श्री अतुल चिताले ने प्रस्तुत किया कि संशोधित दरों के लिए प्रत्यर्थी का दावा अनुबंध की व्याख्या पर आधारित था और इस बिन्दु को विशेष रूप से मध्यस्थों को संदर्भित किया गया था और इसलिए मध्यस्थों का निर्णय अंतिम और बाध्यकारी था तथा इसे रद्द नहीं किया जा सकता था। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि संदर्भ का निहित अर्थ यह था कि मध्यस्थ ब्याज दे सकते हैं।

उनके इस तर्क के समर्थन में कि नोन स्पीकिंग निर्णय अनुबंध के स्पष्ट प्रावधानों द्वारा मध्यस्थ को दिये गये अधिकार क्षेत्र से बाहर था और इसलिए निर्णय अधिकार क्षेत्र के बिना था तथा रद्द किये जाने योग्य था।

अपीलार्थी के विद्वान वकील श्री मनिन्दर सिंह ने इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा जताया अर्थात ऐसासिएटेड इंजीनियरिंग कम्पनी बनाम आन्ध्रप्रदेश सरकार व अन्य, [1991] 4 ऐस.सी.सी. 93 और न्यू इंडिया सिविल इरेक्टर(पी) लिमिटेड बनाम तेल एवं प्राकृतिक गेस निगम, [1997] 11 ऐसे.सी.सी. 775। जैसा कि हम वर्तमान में देखेंगे कि यह निर्णय स्पष्ट रूप से अलग है और अपीलार्थी की मदद नहीं करते हैं।

मस्टिल और बायड ने अपनी पुस्तक 'वाणिज्यिक मध्यस्था' के दूसरे संस्करण में पृष्ठ संख्या 554 में कहा है कि उन मामलो के बीच अन्तर करना हमेशा आसान नहीं होता जहां अधिकार क्षेत्र की बात को और जहां कानून या तथ्य की त्रुटि हो। इस न्यायालय को, वर्षों से निर्णयों के मामलो से निपटने के अवसर मिले है जहां उन मामलो के विपरीत न्यायशास्त्र की आवश्यकता थी, जहां अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में त्रुटि थी। इस न्यायालय की अलग-अलग पीठो द्वारा निर्णयों की श्रृंखला में कहा गया है कि अधिकार क्षेत्र की त्रुटि होने पर निर्णय को रद्द किया जा सकता है, लेकिन अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में त्रुटि होने पर नहीं। हम सबसे पहले बडी पीठों के निर्णयों को संदर्भित करने से पहले दो न्यायाधीशों वाली विभिन्न खण्ड पीठों द्वारा दिये गये कुछ निर्णयों का उल्लेख करेंगे।

तारापुर एण्ड कम्पनी बनाम कोचीन शिपयार्ड लिमिटेड, कोचीन व अन्य [1984] 2 ऐसे.सी.सी. 680 इस प्रश्न पर विस्तृत चर्चा की कि इस

बिन्दु पर सभी निर्णयों का उल्लेख करते हुए एक निर्णय को कब अलग किया जा सकता है। पृष्ठ 718 पर यह देखा गया कि "चर्चा इस अपरिहार्य निष्कर्ष की और ले जाती है कि मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र को छूने वाले कानून का एक विशिष्ट प्रश्न विशेष रूप से मध्यस्थ को संदर्भित किया गया था और इसलिए मध्यस्थ का निर्णय पक्षों पर बाध्यकारी है और निर्णय को एक मात्र आधार पर रद्द नहीं किया जा सकता है कि निर्णय के सामने स्पष्ट रूप से कानून की त्रुटि थी।" यू.पी.होटल और अन्य बनाम उत्तरप्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड, [1989] 1 ऐसे.सी.सी. 359 में इस प्रकार देखा गयाः

> "यदि कानून का कोई विशेष प्रश्न मध्यस्थ को उसके लिए प्रस्तुत किया जाता है और वह इस पर निर्णय करता है तथ्य यह है कि निर्णय त्रुटिपूर्ण है तो वह निर्णय को पहली नजर में गलत नहीं बनाता है ताकि उसे रद्द करने की अनुमति दी जा सके। और जहां मध्यस्थता के लिए निर्दिष्ट प्रश्न का सवाल है जो आमतौर पर कानून का सवाल है, मध्यस्थ के फैसले को केवल इसलिए दरकिनार नहीं किया जा सकता है क्योंकि न्यायालय स्वयं एक अलग निष्कर्ष पर पहुंची है, किन्तु अगर यह निर्णय के तथ्य पर प्रकट होता है उदाहरण के लिए मध्यस्थ ने अवैध रूप से कार्यवाही की है, ऐसे साक्ष्य पर निर्णय करके जो स्वीकार्य नहीं था, या सिद्धान्त पर जो निर्माण को कानूनी रूप से

स्वीकार नहीं करता है उसमें त्रुटि है जो कानून निर्णय को रद्द करने के लिए आधार हो सकता है।

तारापुर एण्ड कम्पनी के मामले में उपरोक्त निर्णय का उल्लेख करते हुए यू.पी.होटल के मामले में पृष्ठ 371 पर इस प्रकार देखा गयाः

"यदि किसी कानून का प्रश्न विशेष रूप से संदर्भित किया जाता है और यह स्पष्ट हो जाता है कि पक्ष न्यायालय के बजाए मध्यस्थ से विशिष्ट प्रश्न पर निर्णय लेना चाहते हैं तो न्यायालय मध्यस्थ के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करेगा कि निर्णय के सामने स्पष्ट रूप से कानून की त्रुटि थी, भले ही मध्यस्थ द्वारा लिया गया कानून का दृष्टिकोण न्यायालय के दृष्टिकोण के अनुरूप न हो। इसके लिए न्यायालय द्वारा निर्णयों की एक लम्बी श्रृंखला पर भरोसा किया गया था।"

उस मामले के तथ्यों पर यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "कार्यवाही के दौरान निश्चित रूप से कानून का प्रश्न उत्पन्न हुआ। मध्यस्थ द्वारा इस प्रश्न का निर्णय एक ऐसे दृष्टिकोण पर किया गया है जो संभव है। भले ही मध्यस्थ को संदर्भित कानून के प्रश्न का कोई विशिष्ट संदर्भ नहीं था, लेकिन इसमें कानून का प्रश्न शामिल था। यहां तक कि इस धारणा पर भी कि ऐसा दृष्टिकोण सही नहीं है, निर्णय न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप या

सुधार के लिए नहीं है क्योंकि कानून का कोई प्रस्ताव नहीं है जिसे मध्यस्थ के निर्णय का आधार कहा जा सके, और जो गलत है। पी.वी.सुब्बानायडु और अन्य बनाम आन्ध्रप्रदेश सरकार, [1998] 9 ऐसे.सी.सी. 407, यह न्यायालय एक ऐसे मामले पर विचार कर रहा था जिसमें उच्च न्यायालय ने एक नान स्पीकिंग निर्णय को रद्द कर दिया था। अपील को स्वीकार करते हुए न्यायालय ने कहा कि पक्षों के बीच अनुबंध की शर्तों के तहत दावा टिकाउ था या नहीं यह देखने के लिए अनुबंध की जांच व व्याख्या करने में उच्च न्यायालय सही नहीं था।

ऊपर दिये गये निर्णय को पढने से पता चलता है कि जिस सिद्धान्त का पालन किया गया था वह यह था कि अनुबंध का अर्थ समझने के लिए न्यायालय यह कहने का बोझ अपने ऊपर नहीं ले सकती थी कि निर्णय अनुबंध के विपरीत था और इस तरह मध्यस्थों ने अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर काम किया था।

मध्यस्थों की अधिकारिता के भीतर एक त्रुटि और मध्यस्थ की अधिकारिता से बाहर त्रुटि के बीच के अन्तर को सुदर्शन ट्रेडिंग कम्पनी बनाम केरल सरकार [1989] 2 ऐसे.सी.सी. 38 मामले में इस न्यायालय के फैसले में संक्षिप्त रूप से सामने लाया गया। जहां इस न्यायालय ने पृष्ठ 56 पर निम्नानुसार निर्णय दिया:

"हैल्सबेरी के लाज आफ इंग्लैंड II 4th संस्करण के वाल्यूम 2 के पैरा 622 गलत आचरणों में से एक, मध्यस्थ द्वारा किसी ऐसे मामले पर निर्णय है जो समझौते या संदर्भ में शामिल नहीं है लेकिन ऐसे मामले में किसी को अधिकार क्षेत्र के भीतर त्रुटि और क्षेत्राधिकार से अधिक की त्रुटि के बीच अन्तर निर्धारित करना होगा....... .यदि एक विशेष राशि का भुगतान किया जाना था या नुकसान उठाना पड़ सकता था यह निर्णय इस मामले में मध्यस्थ की सक्षमता के भीतर था। अनुबंध का अर्थ समझने का दावा करके न्यायालय यह कहने का बोझ अपने ऊपर नहीं ले सकती कि यह अनुबंध के विपरीत था, और, इस तरह अधिकार क्षेत्र से परे था। यह निर्धारित करना होगा कि मध्यस्थ के क्षेत्राधिकार से संबंधित विवादों और उस क्षेत्राधिकार का उपयोग किस तरह किया जाना चाहिए, के बीच अन्तर है। पृष्ठ 57 पैरा 32 पर यह माना गया है किः

> "एक बार जब अनुबंध के बारे में कोई विवाद नहीं होता है, तो उस अनुबंध की व्याख्या क्या है, मध्यस्थ के लिए एक मामला है और जिस पर न्यायालय अपने निर्णय को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है।"

इस न्यायालय की बडी पीठों के निर्णय में भी इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया है। जीवराज भाई उज्जमशी सेठ और अन्य बनाम चिन्तामनराव बालाजी और अन्य, [1964] 5 ऐसे.सी.और. 480 पृष्ठ संख्या

498 में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "न्यायालय को किसी अधिनिर्णय को रद्द करने के आवेदन पर विचार करते हुए इस बात पर विचार नहीं करना है कि साक्ष्य पर मध्यस्थ का दृष्टिकोण उचित है या नहीं। मध्यस्थ के निर्णय को आमतौर पर पक्षों के बीच बाध्यकारी माना जाता है, क्योंकि वह पक्षों द्वारा चुना गया एक न्यायाधिकरण है और निर्णय को रद्द करने की न्यायालय की शक्ति धारा 30 में निर्धारित मामलों तक ही सीमित है। यह न्यायालय के लिए अनुमान लगाने के लिए खुला नहीं है कि जहां मध्यस्थ द्वारा कोई कारण नहीं दिये गये हैं, कि मध्यस्थ को अपने निर्णय तक पहुंचने के लिए किस बात ने प्रेरित किया। इस धारणा पर कि मध्यस्थ तर्क की एक निश्चित प्रक्रिया द्वारा अपने निष्कर्ष पर पहुंचा होगा, न्यायालय यह निर्धारित करने के लिए आगे नहीं बढ सकता है कि निष्कर्ष सही है या गलत। यह न्यायालय के लिए मानसिक प्रक्रिया की जांच करने के लिए खुला नहीं है जिसके द्वारा मध्यस्थ पहुंच गया है। उसका निष्कर्ष यहां उसके निर्णय की शर्तों द्वारा इसका खुलासा नहीं किया जाता है। मैसर्स कपूर नीलोखेरी कम्पनी डेयरी फार्म सोसायटी लिमिटेड बनाम भारत संघ व अन्य, [1973] 1 ऐसे.सी.सी. 708 पृष्ठ 713 पैराग्राफ 12 पर न्यायालय ने कहा श्रीमान नरीमन, प्रतिवादीगण की और से पेश अतिरिक्त सोलीसिटर जनरल ने यह तर्क दिया कि अपीलकर्ता ने विशेष रूप से कहा है कि इनके दावे समझौते पर आधारित हैं और कुछ नहीं और मध्यस्थ को जो कुछ भी तय करना था, वह समझौते के प्रभाव

के बारे में था, मध्यस्थ को वास्तव में 6 मई 1953 के समझौते यानि दस्तावेज की व्याख्या के कानून के प्रश्न का निर्णय करना था और उसका निर्णय चुनौती के लिए खुला नहीं है। हम उनसे सहमत हैः दुर्गाप्रसाद बनाम सेवकिशनदास और गुलाम फिलानी बनाम मुहम्मद हुसैन का निर्णय देखे। हिन्दुस्तान कन्स्ट्रक्शन कम्पनी लिमिटेड बनाम जम्मू कश्मीर राज्य, [1992] 4 ऐसे.सी.सी. 217 में चेम्पसी भारा व जीवराज बल्लू स्पिनिंग एण्ड वीविंग कम्पनी लिमिटेड, एओईओर (1923) पीसी 66 में प्रीवी काउन्सिल के फैसले का उल्लेख करने के बाद और इस न्यायालय में पृष्ठ 222 पर पैरा 8 में न्यायालय ने निम्नलिखित बातें देखीः

"वर्तमान मामला ठीक उसी प्रकार का है जो पहले न्यायिक समिति के समक्ष था। मध्यस्थों ने ठेकेदार को उसके दावों के खिलाफ वस्तु संख्या 2 व 5 पर राशि प्रदान की है। वे अनुबंध या उसके किसी भी खण्ड का कोई संदर्भ नहीं देते हैं फिर भी राज्य का तर्क है कि चूंकि यह अनुबंध की कुछ शर्तों के अन्तर्गत आने वाली वस्तुएं हैं, इसलिए न्यायालय को उन शर्तों को देखना चाहिए और उनकी व्याख्या करनी चाहिए, यदि ऐसा किया जाता है तो यह कहा जाता है कि राज्य की व्याख्या स्वीकार करने के लिए न्यायालय बाध्य है और जिसे स्पष्ट रूप से मध्यस्थों द्वारा स्वीकार किया जाता है, वह गलत पाया जायेगा। यह वह तर्क है जिसे स्वीकार कर लिया गया है। ऐसा नहीं किया जा सकता है भले ही, वास्तव में, मध्यस्थों ने विवादित वस्तुओं पर अपना अधिनिर्णय देने में अनुबंध और इसके

प्रासंगिक खण्डों की व्याख्या की थी, भले ही व्याख्या गलत हो, न्यायालय अधिनिर्णय को नहीं छू सकता क्योंकि अनुबंध की व्याख्या करना मध्यस्थों के न्यायक्षेत्र के भीतर है चाहे व्याख्या सही हो या गलत, पक्षकार इसके लिए बाध्य होंगे, केवल तभी जब निर्णय में अपनी व्याख्या की रेखा निर्धारित करने में त्रुटि पाई जाती है न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है।" (जोर दिया गया)

के.और.रविन्द्रनाथन बनाम केरल राज्य व अन्य में इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने [1996] 10 ऐसे.सी.सी. 35 में कहा कि इस सवाल पर कि क्या मध्यस्थ ने अपने अधिकार क्षेत्र को पार किया था का सुदर्शन ट्रेडिंग कम्पनी के मामले (सुप्रा) इंजीनियरिंग कम्पनी का मामला (सुप्रा) के फैसले के बीच संघर्ष प्रतीत हुआ। इस आदेश द्वारा मामला एक बडी पीठ को भेजा गया था। के.और.रविन्द्रनाथन [1998] 9 ऐसे.सी.सी. 410 के मामले में तीन न्यायाधीशों की एक खण्डपीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

> "अपीलार्थी के विद्वान वकील बताते हैं कि वर्तमान अपीलों में जारी किये गये प्रश्न पूरी तरह से हिन्दुस्तान कंस्ट्रक्शन कम्पनी लिमिटेड बनाम जम्मू कश्मीर राज्य मामले में इस न्यायालय के फैसले को पूरी तरह से शामिल किया गया है। विशेष रूप से, इस निर्णय के पैरा 10 और

सुदर्शन ट्रेडिंग कम्पनी मामले में निर्णय से निकाले गये हिस्से ने हमारा ध्यान आकृषित किया है, जिसमें यह कहा गया था कि अनुबंध का अर्थ समझने के लिए न्यायालय यह कहने का भार अपने ऊपर नहीं ले सकता था कि यह अनुबंध विपरीत था और जैसा कि इस तरह, न्यायशास्त्र से परे था। अदालत ने तत्काल मामले में ठीक किया है। इसलिए, यह मुद्दा इस निर्णय द्वारा कवर किया गया है और उत्तरदाता के लिए विद्वान वकील इस निर्णय के सामने अन्यथा तर्क नहीं दे सकते हैं।"

इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय से, और विशेष रूप से अंतिम निर्णय के, यह स्पष्ट है कि जब मध्यस्थ को किसी अनुबंध का अर्थ समझने की आवश्यकता होती है, तो केवल इसलिए कि कोई अन्य दृष्टिकोण संभव हो सकता है, न्यायालय को अनुबंध का अर्थ अलग तरीके से समझने में न्यायसंगत नहीं माना जायेगा और फिर यह देखते हुए निर्णय को रद्द नहीं किया जायेगा कि मध्यस्थ ने निर्णय देने में अधिकार क्षेत्र को पार किया है।

यह निर्धारित करने के लिए कि क्या मध्यस्थ ने अधिकार क्षेत्र के बाहर कार्य किया है, यह देखना होगा कि क्या दावेदार मध्यस्थ के समक्ष कोई विशेष विवाद या दावा उठा सकता है। यदि उत्तर हां है तो यह स्पष्ट है

कि मध्यस्थ के पास इस तरह के दावे से निपटने का अधिकार क्षेत्र होगा। दूसरी और यदि मध्यस्थता खण्ड या अनुबंध में एक विशिष्ट शर्त या कानून मध्यस्थ को दावेदार द्वारा उठाये गये विवाद पर निर्णय लेने की अनुमति नहीं देता है या किसी विशेष विवाद या दावे को उठाने के लिए विशिष्ट प्रतिबंध है तो मध्यस्थ द्वारा उसके संबंध में दिया गया कोई भी निर्णय स्पष्ट रूप से न्यायक्षेत्र से बाहर होगा। यह पता लगाने के लिए कि क्या मध्यस्थ ने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य किया है, न्यायालय को यह देखने के उद्देश्य से अनुबंध के साथ-साथ मध्यस्थों को किये गये विवाद के संदर्भ सहित कुछ दस्तावेजो को देखना पड़ सकता है कि क्या मध्यस्थ के पास निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र है या नहीं।

इस मामले में मध्यस्थता खण्ड व्यापक रूप से लिखा गया है। विवाद जो अनुबंध के निर्माण से संबंधित था, अन्य बातों के साथ-साथ मध्यस्थों को भेजा गया था। अनुबंध ने ठेकेदार को दरों में संशोधन के लिए दावा करने की कल्पना दी। विवाद यह था कि इस तरह का दावा कब किया जा सकता है। इसमें अपीलार्थी के अनुसार यह एक वस्तु दर अनुबंध होने के कारण दरों का संशोधन केवल खण्ड 12ए के अनुसार ही हो सकता है जब अलग-अलग वस्तुओं के संबंध में 20 प्रतिशत से अधिक का विचलन होता है। दूसरी और, दावेदार के अनुसार अनुबंध की शर्तों में अनुबंध के कुल मूल्य में 20 प्रतिशत की वृद्धि होने पर दरों में संशोधन का दावा करने की अनुमति दी। इसलिए मध्यस्थों के समक्ष विवाद स्पष्ट रूप

से अनुबंध की शर्तों की व्याख्या से संबंधित है। उक्त अनुबंध को दोनों पक्षों द्वारा अलग-अलग पढा जा रहा था। इसलिए, मध्यस्थों को स्पष्ट रूप से अनुबंध की शर्तों का अर्थ समझने या व्याख्या करने के लिए कहा गया था। उस पर लिया गया निर्णय, भले ही वह गलत हो, अधिकार क्षेत्र के बाहर नहीं कहा जा सकता है। यह नहीं कहा जा सकता है कि निर्णय से पता चलता है कि अधिकार क्षेत्र की त्रुटि थी, भले ही मध्यस्थों द्वारा इसके प्रयोग में कोई त्रुटि हुई हो।

एसोसिएटेड इंजीनियरिंग कम्पनी के मामले में निर्णय के आधार पर श्री मनिन्दर सिंह किसी भी तरह से हमें उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से अलग दृष्टिकोण लेने के लिए राजीना नहीं करते है। पृष्ठ 103 पर थामेन, जे. ने न्यायालय की और से बोलते हुए निम्नलिखित टिप्पणी कीः

> "मध्यस्थ मनमाने ढंग से, तर्कहीन रूप से, स्वेच्छारिता से या अनुबंध से स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं कर सकता है। उसका एक मात्र कार्य अनुबंध के संदर्भ में मध्यस्थता करना है। अनुबंध के तहत पार्टियों ने जो कुछ दिया है, उसके अलावा उसके पास कोई शक्ति नहीं है। यदि वह अनुबंध की सीमा से बाहर गया है, तो उसने अधिकार क्षेत्र के बाहर काम किया है। लेकिन अगर वह अनुबंध के मापदण्डो के भीतर रहा है और अनुबंध के प्रावधानों का अर्थ समझा है

तो उसके निर्णय में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है जब तक कि निर्णय के लिए कोई स्पष्ट त्रुटि का खुलासा नहीं किया गया है।"

वर्तमान मामले में अनुपात को लागू करते हुए यह कहना संभव नहीं है कि वर्तमान मामले में मध्यस्थ ने अनुबंध की सीमा से बाहर कार्य किया हो। संदर्भ लिखने से पहले दोनों पक्षों के बीच पत्राचार से पता चलता है कि मध्यस्थों को अनुबंध का अर्थ समझने के लिए कहा गया था ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि क्या ठेकेदार दरों में संशोधन का दावा करने का हकदार था और यदि ऐसा है तो संशोधित दरें क्या होनी चाहिए। ठेकेदार द्वारा अनुबंध पर रखे गये दावे को अविश्वसनीय नहीं कहा जा सकता है, भले ही मध्यस्थों ने अनुबंध की शर्तों का गलत अर्थ लगाया हो। यह नहीं हो सकता है कि निर्णय उनके अधिकार क्षेत्र के बाहर हो। उनका अधिकार क्षेत्र स्पष्ट रूप से अनुबंध की शर्तों का अर्थ समझने के लिए था और उस पर उनका निर्णय अंतिम और पक्षों के लिए बाध्यकारी है।

न्यू इण्डिया सिविल इरेक्टर (पी) लिमिटेड, (सुप्रा), नान स्पीकिंग निर्णय को चुनौती देने से संबंधित एक

मामला था। पक्षों के बीच विवादो में से एक निर्मित क्षेत्र को मापने के तरीके/विधि के संबंध में था। माप के तरीके के संबंध में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि जिस दर को उद्दत किया गया था, उसमें बालकनी क्षेत्रो को शामिल नहीं किया गया था। यह विवादित नहीं था कि निविदा सूचना के साथ संलग्न फ्लेटों की योजना बालकनी के निर्माण के लिए प्रदान की गई थी। उसमें अपीलार्थी का दावा था कि क्योंकि बालकनी वास्तव में निर्मित नहीं थी बल्कि निर्मित क्षेत्र में शामिल थी इसलिए वे उसके संबंध में भुगतान किये जाने का हकदार है। उच्च न्यायालय ने मध्यस्थों के निर्णय को रद्द कर दिया। निर्णय को बरकरार रखते हुए न्यायालय ने कहा कि मध्यस्थों ने निर्मित क्षेत्र के माप में बालकनी के क्षेत्र को शामिल करके अपने न्यायक्षेत्र को आगे बढाया है। अनुबंध की शर्तों में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया था कि फर्श के कुल निर्मित क्षेत्र में बालकनी को बाहर रखा जाना चाहिए और इसे ध्यान में नहीं रखना चाहिए। इसलिए ठेकेदार इस क्षेत्र के संबंध में कोई दावा नहीं कर सका। अनुबंध ने भुगतान पर प्रतिबंध लगा दिया,

स्वीकृत योजना में दिखाये गये बालकनी के क्षेत्र के। केवल इसलिए बालकनी संलग्न थी, इसके संबंध में कोई भुगतान करने की अनुमति नहीं

दी थी। इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि मध्यस्थों ने अपने अधिकार क्षेत्र के बाहर जाकर कार्य किया था क्योंकि निर्णय माप के तरीके से संबंधित शब्द के विपरीत था और जिस शब्द की व्याख्या में कोई विवाद नहीं था। दूसरे शब्दों में, उस न्यायालय में मध्यस्था कार्यवाही में अनुबंध का निर्माण मुद्दा नहीं था। उस मामले में अनुबंध की अवधि की व्याख्या नहीं की गई थी। अनुबंध ने बालकनी के संबंध में भुगतान पर प्रतिबंध लगा दिया, लेकिन मध्यस्थ के निर्णय ने उसके संबंध में एक राशि प्रदान की थी, इसलिए यह अधिकार क्षेत्र के बाहर था।

हमारी राय में उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में विवाद संख्या 1, 2 और 4 के संबंध में मध्यस्थों के निर्णय से संबंधित निर्णय को रद्द नहीं करने का फैसला सही था।

तब श्री मनिन्दर सिंह द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि मध्यस्थों ने रूपये 3,99,800 की राशि के भुगतान का फैसला सुनाया था जो 22 दिसम्बर 1976 से भुगतान की तारीख तक ब्याज के रूप में था। उन्होंने कहा कि यह ब्याज नहीं दिया जा सका। सचिव, सिंचाई विभाग, उडीसा सरकार और अन्य बनाम जी.सी.राय, [1992] 1 ऐसे.सी.सी. 508 और उडीसा राज्य व अन्य बनाम बी.एन.अग्रवाल, [1997] 2 ऐसे.सी.सी. 469

मामलों में इस न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए हमें इस विवाद में कोई योग्यता नहीं देखते हैं।

उपरोक्त कारणों से यह अपील खारिज की जाती है। हालांकि, पक्षकारान उनका अपना खर्च खुद वहन करेंगे।

याचिका खारिज

नोट- यह अनुवाद ऑर्टिफिशियल इन्टेलीजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी नरेन्द्र सिंह (और.जे.ऐसे.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।